Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

उपनिषदों में वाक् की उत्पत्ति एवं स्वरूप

सुलभा
शोधार्थी, संस्कृत–विभाग बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर रोहतक (हरियाणा) 124021
डॉ. पटेल सिंह
शोध–निर्देशक, सहायक प्रोफेसर, संस्कृत–विभाग बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर रोहतक (हरियाणा) 124021

शोध सारः
वाणी चेतना की अमर देन है। वाणी के बिना जगत् सूना है, जीवन पंगु है। संसार के प्रायः सारे व्यवहार वाणी–व्यापार पर निर्भर हैं। सभ्यता और संस्कृति उसकी गोद में फलती फूलती है। वाणी केवल विचारों के विनिमय का ही माध्यम नहीं, अपितु विश्व में जो कुछ सत्य है, शिव है, सुन्दर है, उन सबका भी व्यञ्जक है। इस वाणी की दूसरी प्राचीन संज्ञा वाक् है। वाक् के विषय में उपनिषदों में मधुर उद्गार तथा युक्तिपूर्ण विचार भरे पड़े हैं, साथ ही उसके भौतिक, दैविक तथा आध्यात्मिक रूप की रेखा भी खींची गई है, जिसे देख आज का भाषावैज्ञानिक भी चकित रह जाता है। उपनिषद्–कालीन वाक् के स्वरूप की पीठिका वेदों में ही तैयार हो गयी थी और उसी समय इसे रहस्य की कोटि में डाल दिया गया था। जल में, थल में, औषधियों में–सभी में दैवी सत्ता को परखने वाले वैदिक ऋषि वाक् को अनुकरणमूलक या मनोरोग व्यञ्जक कैसे मान सकते थे। ऋग्वेद के अनुसार वाक् देवों से उत्पन्न हुई।

मुख्य शब्दः वाक्, वाणी, शब्द, उपनिषद, ऋग्वेद, ब्रह्म, प्राण, मन (विचार), नाद, बिंदु, स्फोट, गायत्री, ज्ञान, चेतना, सृष्टि–तत्त्व, सौंदर्य (रस), कला–तत्त्व, उद्गीथ, साम, भाषा–दर्शन।

वेदों में वाक् के जो स्वरूप मिलते हैं, वे उपनिषदों में विकसित रूप में दीख पड़ते हैं। वैदिक कवियों के हृदय में जो भावना उठी, वह शब्दों के रूप में बाहर आ गयी। वहाँ बनावट नहीं, अतः किसी वस्तु के परीक्षण की इच्छा का भी अभाव है। उनकी अधिकांश समस्याएं द्वन्द्वमय जीवन के बाह्य रूप से सम्बन्ध रखती हैं। उपनिषद् ऋषियों के सामने बाह्य जीवन की समस्याएं नहीं थीं। उनका मुख्य उद्देश्य सत्य की खोज था। अतः उनकी विचार परंपरा में तारतम्य का सौष्ठव है। उनकी रहस्यानुभूति में भी तर्क की छाया दिखाई देता है। उन्होंने जीवन को गति देने वाले अन्न, प्राण, मन आदि जो कुछ हैं, उन सबके याथार्थ्य की बारी–बारी से समीक्षा की है। उपनिषदों में वाक् के स्वरूप का निर्देश भी इसी समीक्षा का फल है। प्रायः सभी उपनिषदों में वाक् के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डाला गया है जिसे निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है –

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

वाक् की उत्पत्ति

वाक् के विषय में विचार करने पर सर्वप्रथम प्रश्न वाक् की उत्पत्ति पर उत्पन्न होता है। वेदों में वाक् को देवी कहा है। उपनिषद् के ऋषियों ने इस मत को पूर्ण सम्मान देते हुए वैज्ञानिक रूप से भी व्याख्या की है। वाक् की उत्पत्ति के विषय में छान्दोग्योपनिषद् में कहा है कि – लोक में प्राणियों द्वारा तालु आदि से व्यक्त होने वाला जितना भी वर्णादि रूप शब्द यानि ध्वनि है तथा बाजे या मेघादि के कारण होने वाला और जो कुछ भी शब्द है, वह वाक् है।[1] ऐतरेयोपनिषद् में वाक् को ईश्वर के संकल्प रूप तप से तपे हुए पिण्ड के मुख से उत्पन्न बताया है और उस वाक् से वाणी का अधिष्ठाता लोकपाल अग्नि हुआ।[2] तै०उ० में भी वाक् और जिव्हा के सम्बन्ध का स्पष्ट संकेत किया गया है।[3] प्राण और अपान की जो व्याज नामक सन्धि है, वही मूल वाणी है।[4] क्योंकि व्यान के प्रयत्न से ही वाग् का उच्चारण होता है। इस कारण कार्य–कारण के अभेद विवक्षा से व्यान शब्द को वाच्य वागू कहा गया है। इस कारण प्राण ओर अपान वायु के व्यापार को न करते हुए मनुष्य वचन को बोलता अर्थात् उच्चारण करता है। उपनिषद् के ऋषियों ने इस जिव्हा–व्यापार के पीछे छिपी हुई प्राणशक्ति और मानसिक शक्ति का भी संकेत किया है, जिनका अत्यन्त सूक्ष्म विवेचन बाद के उपनिषदों और तांत्रिक ग्रन्थों में बीज, बिन्दु, नाद आदि के रूप में और व्याकरण–दर्शन में 'स्फोट' के रूप में किया गया है। मृत्यु को शरीरी कुमार अग्नि ने अपनी और मुंह फाड़े खाने को प्रवृत्त देखकर स्वाभाविकी अविद्या से युक्त होने के कारण डर कर 'भाण' ऐसा शब्द किया, वही वाक् यानी शब्द हुआ।[5]

वाक् लोकयात्रा में अद्वितीय सहायक है

वाक् मानव की लोकयात्रा में अद्वितीय रूप से सहायक होती है। वाक् मनुष्य को कुमार्ग पर चलने से रोकती है तथा नीति उपदेश द द द (दया करो, दमन करो, दान दो) के द्वारा देती

---

[1] यः कश्च शब्दः वागेव सा।
–छा०उ०, 2.5.3

[2] मुखाद्वाग।
–ऐ०उ०, 2.2.4

[3] वाक् सन्धिः, जिव्हा सन्धानम्।
– तै०उ०, 2.3.4

[4] यो व्यानः सा वाक्।
–छा०उ०, 2.3.3

[5] भाणऋगेतांव वागभवत।
–बृ०उ०, 1.2.4

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

है।[6] जनक के द्वारा याज्ञवल्क्य से पूछने पर – जब सूर्य अस्त हो जाता है, चन्द्रमा की चांदनी भी नहीं रहती, जब आग भी बुझी रहती है, उस समय मानव को प्रकाश देने वाली कौन सी वस्तु है? उत्तर मिला – वह वाक् है, वाक् ही पुरुष की प्रकाशक है।[7] वाक् रूपी ज्ञान ज्योति के द्वारा ही विश्व के समस्त मानवों के कार्यकलाप सिद्ध होते हैं। वाक् के बिना मानव की कैसी दयनीय स्थिति होती, इस बात की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। समस्त ज्ञानों का आधार भी वाक् ही है। मानव के आंतरिक और बाह्य कार्य, चिन्तन–मनन–अभिव्यंजन वैयक्तिक और सामाजिक कार्यों के लिए वाक् की ही सहायता ली जाती है। ज्ञान–विज्ञान, धर्म दर्शन, आचार–विचार, हेय–उपादेय का विवेक, सभी का आधार वाक् है। ऐसा कोई ज्ञान नहीं है जो वाक् में समाहित न हो।

वाणी मनुष्य की ज्ञानवृद्धि में भी सहायक है क्योंकि वाणी 'गायत्री' है और गायत्री ही यह सब भूत है। वस्तुतः गायत्री के ज्ञान से बुद्धि की वृद्धि होती है। उससे स्थावर जंगम पदार्थों का बोध होता है। तथा वाणी से ही मनुष्य की प्रथम रक्षा होती हैः भय मत करो, मैं तुम्हारी रक्षाकरूंगा, सत्य बोलो इत्यादि वाणियों से आश्वासित होकर मनुष्य अभय को प्राप्त होता है। अतः वाणी गाती भी है और रक्षा भी करती है। गायत्री शब्द का भी यही अर्थ है।[8]

मानव की लोकयात्रा में सहायक बनने वाली यह वाक् नाम से प्रसिद्ध देवी अवरोधिनी – उपासकों से अभीष्ट की भी सिद्धि करने वाली है।[9] समस्त ज्ञान का एकमात्र अधिष्ठान वाक् ही है।[10] वाणी द्वारा विश्व के सभी कर्म किये जाते हैं. अतः वाणी को विश्वकर्मा कहते हैं। वाक् का स्वरूप इतना विशाल और अगाध है कि उसे ब्रह्म के तुल्य विराट् रूप माना गया है। सम्पूर्ण जगत् के कल्याण के उद्देश्य से ही वाक् नामक स्तोत्र का गान होता है।[11]

---

[6] वागवास्य ज्योतिर्भवनीति वाचंवायं ज्योतिष्तस्ते।
–बृ०उ०, 4.3.5

[7] वगानुवदति स्तनयित्नुदैदद इतिदाम्यत दत दयध्वमिति
–बृ०उ०, 5.2.3

[8] वाग्वं गायत्रीं वाग्वा इदं सवं भूतम। गायति च त्रायते च।
–छा०उ०, 3.12.1

[9] वाड्नाम् देवतावरोधिनी वापेष्मुष्यात।
–कौ०उ०, 2.3

[10] सर्वेषां वेदानां वागेवायतनय।
– बृ०उ०, 2.4.11

[11] स्वरोऽन्नं या वाग्विराट्।
– छा०उ०, 1.13.2

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

वाक् और विचार (मन) का सम्बन्ध

उपनिषदों में वाक् और विचार के परस्पर सम्बन्ध की भी व्यंजना है। बिना भाषा के विचार सम्भव है कि नहीं, यह एक विवादात्मक प्रश्न है। उपनिषदों में इस प्रश्न के समाधान के दो पहलू मिलते हैं। प्रथम यह है कि विचार अथवा ज्ञान वाक् के बिना भी सम्भव है। ज्ञान इस कोटि का हो सकता है जो वाक् से परे हो। उपनिषद्कालीन ऋषि कहते हैं कि ब्रह्म को वाणी से नहीं जाना जा सकता।[12] इससे स्पष्ट है कि वाणी की पहुंच ज्ञान की गहराई तक नहीं है। केनोपनिषद् में भी कहा है कि परमात्मा परब्रह्म तक वाणी की गति नहीं है। वाणी उसका वर्णन नहीं कर सकती।[13] यहां वाक् शब्द का अर्थ यदि श्रुति से लिया जाय तो वह भी ब्रह्म का वर्णन करने पर बाद में नेति–नेति इस प्रकार कहकर किया गया है कि हमारी वाणी में इतनी सामर्थ्य नहीं है जो ब्रह्म के स्वरूप को वर्णित कर सकें।[14]

वाक् के बिना विचार सम्भव है कि नहीं – इस समस्या के समाधान का दूसरा पहलू यह है कि वाक् और विचार का आपस में गहरा सम्बन्ध है। सृष्टिक्रम में मन और वाक् के विचार और वाक् के परस्पर संक्रमण का उल्लेख मिलता है। बृहदारण्यक उपनिषद् में इस बात की पुष्टि निम्नलिखित प्रकार से की है – ''वाक् यह शब्द अर्थात् त्रयी है : वाक् धेनुरूप है। प्राण इसका ऋषभ है और मन इसका वत्स है क्योंकि मन से आलोचना किये हुए विषय में ही वाणी की प्रवृत्ति होती है।[15] कौषीतकि उपनिषद् में मन और वाक् के परस्पर सम्बन्ध की अनिवार्यता प्रतिपादित करते हुए कहा है – प्रज्ञा (मन) से वाक् इन्द्रिय पर आरूढ़ होकर मनुष्य वाणी के द्वारा नामों को ग्रहण करता है।[16] किन्तु प्रज्ञा (मन) से रहित होने पर वागिन्द्रिय किसी भी नाम का बोध नहीं कर सकतीं : क्योंकि उस अवस्था में मनुष्य कहता है

---

[12] नैव वाचा न मनसा प्राप्तुं शक्यते।
– कठो०, 2.3.12

[13] न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति।
–केनो०, 1.3

[14] ना चक्षुषा गृह्यते नापि वाचा।
–मुण्डको०, 3.1.8

[15] वाचं धेनुमुपासीत प्राण ऋषभो मनो वत्सः।
– वृ०उ०, 4.8.1

[16] प्रज्ञया वाचं न समारुद्रय वाचा सर्वांगीण नामान्याप्रोति।
– कौ०उ०, 3.6

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

कि – मेरा मन अन्यत्र चला गया था। मैं इस नाम को नहीं समझ सका।[17] इसीलिए बुद्धिमान मनुष्य को वाक् आदि इन्द्रियों को अपने मन में संयत करना चाहिए।[18]

बृहदारण्यक उपनिषद् में तो जगत् की रचना का कारण भी मन और वाक् के सम्बन्ध से बताया है। मृत्यु ने अन्न की बहुलता के लिए मन और वाकू से मिथुनी भाव अर्थात् आलोचना को प्राप्त हो–होकर इस स्थावर व जंगम् जगत् की रचना की।[19] बृहदारण्यक उपनिषद् में वाणी को मन की स्त्री कहा है : क्योंकि मन का अनुवर्तन करना यह स्त्री के साथ वाणी की समानता है। 'वाक्' यह विधि–निषेध रूप शब्द है, यह श्रोत्रेन्द्रिय द्वारा मन से ग्रहीत, निश्चित और प्रयुक्त होता है, इसलिए वाक् मन की स्त्री के समान है।[20] वाक् और विचार के परस्पर सहयोग की अनिवार्यता देखकर ही कहा गया है – मेरी वागिन्द्रिय मन में स्थित हों (अर्थात् मेरी वागिन्द्रिय और मन एक दूसरे से अनुकूल रहें)।[21]

इस प्रकार उपनिषद् वाक् और विचार के सम्बन्ध को, असम्बन्ध को और वाक् के मूल में स्थित मानसिक क्रिया को अच्छी तरह प्रकट करते हैं।

वाक् के कलापक्ष की अभिव्यंजना

उपनिषदों में वाक् के कलापक्ष की भी अभिव्यंजना है। वाक् स्वयं एक प्रकार की अभिव्यक्ति है। प्रभावान्विति अभिव्यक्ति का नाम कला है। अतः जब वाक् की अभिव्यक्ति संवेदनशील हो उठती है, जब वाक् आह्लादकता, माधुर्य भाव या सत्वाद्रेक को जगाने में समर्थ होती है, उसका कलात्मक रूप निखर उठता है, जिसके भीतर रस और बाहर सौन्दर्य लहराता है। वाक् को सौन्दर्य मीमांसा में कहा है –

वाक् का रस (सौन्दर्य) ऋक् (कविता) है। ऋक् का रस साम (लय – नाद– सौन्दर्य या समरसता) है। साम का रस उद्गीथ (प्रणव) है।[22] भाव यह है कि वाक् का सौन्दर्य छन्द का परिधान पहन कर चमक उठता है। तब वाक् ऋक् छन्द श्लोक अथवा कविता के नाम से

---

[17] न हि प्रज्ञापेता वाङ्ङ्गाम् किं न प्रज्ञापयेत
–कौ०उ०, 3.7

[18] यच्छेद्वाङ् मनसी प्राज्ञः।
–कौ०,1.3.13

[19] स तया वाचा तेनात्मने सर्वमसृजत्।
–बृ०उ०, 1.2.5

[20] मन एवास्यात्मा वाग्जाया।
–बृ०उ०, 1.4.27

[21] यच्छेवाङ् मनसी प्राज्ञः।
–को०, 1.3.13

[22] वाच ऋग् रसः, ऋचः साम रसः, साम उद्गीथो रसः।
–छा०४०, 1.1.2

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

पुकारी जाती है। कविता वाक् का निष्पन्द है। बृ०उ० में – वाक् को बत्तीस अक्षरों वाला बृहती छन्द कहा है।[23] छा०उ० में भी इसी बात को कहा गया है – वाक् बहती है।[24] किन्तु बृ०उ० में वाक् को अनुष्टुप भी कहा गया है तथा वाक् ही शरीर में सरस्वती रूप है और उस वाग् रूपा सरस्वती का ही माणवक उपदेश करते हैं।[25]

इसके अतिरिक्त सामगान में केवल स्वरों का ही सामंजस्य नहीं लाना पड़ता, अपितु बाहर के नाद सौन्दर्य का भीतर की प्राणशक्ति के साथ ऐक्य स्थापित करना पड़ता है। इस साम को उपनिषदों में निम्नलिखित रूप से परिभाषित किया गया है–

साम शब्द वाक् और प्राण का अभिधान भूत है तथा प्राण से निष्पन्न होने वाला जो स्वरादि का समुवाय मात्र गान है, वह भी साम शब्द से कहा जाता है। गीति रूप जो साम–संज्ञक स्वरादि समुदाय है, उसका लोक में सामत्व विख्यात है।[26] तथा छा०उ० में भी कहा है – साम की वाक् (जिह्वामूलीयादि – स्थानों का नाम) ही प्रतिष्ठा है, क्योंकि वाणी अर्थात् जिह्वामूलीयादि स्थानों में प्रतिष्ठित हुआ कि यह प्राण यह गान गाया जाता है। अर्थात् गीतिभाव को प्राप्त होता है, अतः वाक् साम की प्रतिष्ठा है।[27] कविता के बाह्य और आभ्यन्तरिक गुणों का गीतों में स्वभावतः समन्व हो जाया करता है। गीत कविता के श्रृंगार हैं। उद्गीथ गीतों का परिपाक है। ''वाक् ही गीथा है'', क्योंकि उद्गीथ भक्ति शब्दविशेष ही है। 'गै' धातु का अर्थ शब्द करना है, अतः गीथा वाक् ही है। उद्गीथ भक्ति के स्वरूप की शब्द के सिवा और कोई उत्प्रेक्षा नहीं की जा सकती। अतः वाक् ही गीथा है। उत् प्राण है और गीथा प्राणतन्त्र वाक् है, अतः इन दोनों का एक ही 'उद्गीथ' शब्द से कथन होता है।[28] इसका समर्थन छा०उ० में भी किया है – वाणी को गिर (जो सकल विधाओं का उपदेश हो) कहते हैं। तथा उत् शब्द का अर्थ ब्रह्म है। इस प्रकार एक उद्गीथ शब्द से सम्पूर्ण वेद और ब्रह्म

---

[23] वाग्यै बृहती।
–बृ०उ०, 1.3.20

[24] वाग्धि बृहती।
–छा०उ०, 1.2.11

[25] एष उ एव साम वाग्वै सामेष सा वामश्चेति तत्साम्नः सामत्वम।
–बृ०उ०, 1.3.22

[26] तस्य वै वागेव प्रतिष्ठा वाषि हि खत्वेष एतत्प्राणः प्रतिष्ठितो गीयते न्न इत्युर्हक आहुः।
–बृ०उ०, 1.3.27

[27] वागेव गीथोच्च गीथाचेति स उद्गीथः ।
–बृ०उ०, 1.3.23

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

का बोध होता है।[29] यह वाक् औद्गात्र कर्म सम्पन्न करने योग्य भी है। बृहदारण्यक उपनिषद् में देवताओं के द्वारा वाक् से ह्रद्मान करने के लिए कहे जाने पर वाक् ने उनके (देवों के) लिए उद्गान किया। उस वाक् ने भोगमयी वाणी का देवों के लिए तथा शुभ भाषण से युक्त वाणी को अपने लिए गाया।[30] इस प्रकार वाक् का उद्गान आह्लादक स्वरूप का द्योतक है। आह्लादकता में माधुर्य और माधुर्य में रस है। रस का भी नाम आनन्द है। अतः वाक् में कलापक्ष की विश्रान्ति आनन्द में ही होती है

निष्कर्ष

उपनिषदों में वाक् को केवल संप्रेषण का साधन नहीं, बल्कि चेतना, सृष्टि और ब्रह्म–तत्त्व से संबद्ध एक दिव्य शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। वैदिक परंपरा में जहाँ वाक् को देवी और देवोत्पन्न माना गया, वहीं उपनिषदों में उसका दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक विश्लेषण मिलता है। वाक् की उत्पत्ति को प्राण, मन और नाद से जोड़ते हुए यह स्पष्ट किया गया है कि शब्द का मूल केवल शारीरिक उच्चारण में नहीं, बल्कि सूक्ष्म मानसिक और प्राणात्मक क्रियाओं में निहित है। उपनिषद यह भी प्रतिपादित करते हैं कि मन और वाक् का पारस्परिक संबंध अनिवार्य हैकृमन के बिना वाक् अर्थहीन है और वाक् के बिना मन की अभिव्यक्ति अपूर्ण। यद्यपि परम ब्रह्म की अनुभूति वाक् से परे मानी गई है (नेति–नेति सिद्धांत), फिर भी सांसारिक और आध्यात्मिक दोनों स्तरों पर ज्ञान, धर्म, आचार, शिक्षा और सामाजिक जीवन का आधार वाक् ही है। सौंदर्यशास्त्रीय दृष्टि से वाक् का काव्य, छंद, सामगान और उद्गीथ के रूप में विकसित होना यह सिद्ध करता है कि वाक् में रस, माधुर्य और आनंद की अंतर्निहित क्षमता विद्यमान है। इस प्रकार, उपनिषदों में वाक् का स्वरूप ज्ञान–प्रकाशक, सृष्टि–संरक्षक, नैतिक मार्गदर्शक और कलात्मक अभिव्यक्ति—इन सभी आयामों को समाहित करता हुआ दिखाई देता है। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि वाक् उपनिषदों में मानव और ब्रह्म के बीच सेतु, तथा संपूर्ण विश्व–व्यवस्था की एक मूलभूत, सर्वव्यापी और कल्याणकारी शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित है।

---

[29] वाग्गीवांचो ह गिर इत्याचक्षते।
–छा०उ०, 1.3.6

[30] ते ह वाचमूचुत्वं – कल्याणं वदति तदात्मने।
– बृ०उ०, 1.3.2